अंतर्संबंध और बदलाव

– बिपिन जोशी

कत्यूर घाटी में कृषि में आये बदलावों के द्वारा पर्यावरण अध्ययन के कुछ मुद्दों को समझने का प्रयास इस लेख में किया गया है। इस आलेख में रोजाना के जीवन अनुभवों को देखा जा सकेगा।

कत्यूर घाटी में कृषि में आये बदलाव के द्वारा पर्यावरण अध्ययन के कुछ मुद्दों को समझने का प्रयास कर रहा हूं। इस प्रयास को मैं अपने रोजाना के जीवन–अनुभवों में देखता रहा हूं। जिस घाटी में मैं रहता हूं उसे कत्यूर घाटी के नाम से जाना जाता है। गोमती नदी के किनारे बसे अधिकांश गांवों के लिए गोमती नदी एक जीवन रेखा की तरह है। सिंचाई से लेकर पेयजल तक समस्त जरूरतों को पूरा करती अविरल बहती गोमती के जल स्तर में कितनी कमी आई है यह अध्ययन का विषय है। सिंचाई का जिक्र आया है तो खेती–किसानी और घाटी के सांस्कृतिक–सामाजिक जीवन पर भी सहज दृष्टिपात हो ही जाता है। किसी भी समाज में परिवर्तन होते ही हैं, किसी भी समृद्ध समुदाय की पहली शर्त है समय के साथ होने वाले परिवर्तन को देखें, उसे जांच परख कर अपनाएं या मान्यता दें। लेकिन जांचने परखने की कोई सटीक परम्परा या विधि हमारे समाजों में नहीं रही है। ऐसा कैसे होगा यह भी समझ नहीं आता है। क्योंकि आज हम अपने जीवन की अधिकांश जरूरतें, बाजार द्वारा प्रचारित और प्रस्तुत साधनों से पूरी करते हैं। हमारे अपने काम–धन्धे या तो विकास की भेंट चढ़ गये या फिर अप्रासंगिक हो गये। पर्यावरण अध्ययन की बात करते हुए कक्षा–कक्ष से बाहर कुछ सवाल मेरे मन में आये। एक दिन स्कूल को जा रहे बच्चे जो सम्भवतः सरकारी और प्राइवेट स्कूलों के थे। रास्ते में बतियाते हुए जा रहे थे। उनकी बातें कक्षा–कक्ष की नहीं थी लेकिन एक बच्चे ने रास्ते के नीचे वाले खेत में चल रहे ट्रैक्टर की ओर इशारा करते हुए कहा कि – 'अब तो बल्द और पुराण ह–भान नि दिखीन, नान वाल ट्रैक्टर बढ़िया छू।' उस बच्चे की बात को समर्थन देते हुए दूसरे बच्चे ने तपाक से अपनी बात जोड़ी और कहा कि 'म्यर कक ले बेई लुवक हौ ल्यहरीन।' अर्थात बच्चे ने रास्ते के नीचे खेत में चल रहे छोटे ट्रैक्टर की ओर देखते हुए कहा कि अब तो खेतों में बैल और हल नहीं दिखते, उनसे अच्छी तो यह मशीन है। उस बच्चे की बात को समर्थन देते हुए दूसरे बच्चे ने कहा 'हां मेरे चाचा भी कल लोहे का एक हल लाये हैं।'

वैसे खेती–किसानी कोई फैक्ट्री चलाने जैसा काम नहीं है।

खेती में आदमी, जानवर, वनस्पतियां, मौसम, गीत, लोगों के सहकार, आपसी परस्परता सभी बराबर के हिस्सेदार हैं। कोई कहे कि मैं तो अकेले खेती कर लूंगा यह असंभव है इसलिये खेती भी एक सामाजिक काम है। इसमें जितना कष्ट है उतना ही सुकून भी है। ज्यादा मारामारी, हायतौबा नहीं है। घाटी के विगत पन्द्रह वर्षों के परिवर्तनों को देखे तो कुछ बातें स्पष्ट होती हैं। हमारे खेतों में कभी लोहे का हल नहीं लगा, तब शायद बने भी नहीं थे। आज छोटे ट्रैक्टर से जुताई हो रही है। अब वो बैल और हलिए भी नहीं रहे जो खेत जोतने से लेकर फसल समेटने तक साथ देते थे। बदलाव का एक झोंका आया और हट्टे–कट्टे बैलों और लकड़ी के कृषि यंत्र बनाने वाले लोगों को बेरोजगार कर गया। अब बैल गांव के पास लगे कस्बों में टहलने लगे हैं। कृषि यंत्र बनाने वाले गांव से पलायन कर रहे हैं। सहकार और परस्पर निर्भरता की कड़ी कमजोर हो रही है। खेती–बाड़ी के तौर–तरीके बदल रहे हैं। खेतों में गोबर की खाद का उपयोग कम हो रहा है, कारण है पशुधन का कम होना। लकड़ी का हल जब बैल से जुड़ता था तो बहुत सी चीजें साथ में चलती थीं। कान फोड़ूं शोर करते ट्रैक्टर के साथ कोई हुड़की बोल कैसे लग सकता है? हुड़की बोल – कुमाऊं में धान की रोपाई और गुड़ाई करते हुए खेत में लोक गीत गाने की परम्परा है। इसमें एक व्यक्ति वाद्ययंत्र हुड़के को बजाता है और गीत की एक लाइन देता है, रोपाई लगाने वाले उसे दुहराते हैं। रिदम और गीत के साथ तीखी धूप में दिन भर कमर झुका कर काम करती महिलाएं थकान की शिकन अपने अपने चेहरे पर नहीं पड़ने देतीं। लेकिन मशीनी हल जुताई के साथ ऐसा सम्भव नहीं है।

खेती किसानी को प्रभावित करने में परिवारों की भी बड़ी भूमिका रही है। संयुक्त परिवारों के एकल में बदल जाने से काम करने वाले हाथ भी कम हो गये।

पशु धन का प्रभाव कम हुआ तो बीज और खाद के लिए हमारी निर्भरता बाजार पर होने लगी है। जैविक खाद की कमी अब पहाड़ की खेती में भी दिखने लगी है। इसका असर यहां के खान–पान से उपजी स्वास्थ्य समस्याओं में दिखने लगा है। यानि विकास की आधुनिक सोच का असर बहुत दिनों तक छिपा नहीं रह सकता। लोहे के कृषि यंत्रों की पैरवी करने वालों का तर्क रहता है कि कृषि यंत्र लकड़ी के बनते हैं तो पेड़ों पर दबाव बढ़ता है। लेकिन जितना समय लोहे को बनने में लगता है, और जिस अंधाधुध गति से लोहे का उपयोग हो रहा है उसका असर भूमिगत संसाधनों पर पड़ेगा। क्या यह दबाव प्राकृतिक असंतुलन को बढ़ावा नहीं देगा। पेड़ तो लगाया भी जा सकता है। लेकिन लोहा तो नहीं बन सकता। उसका कोई विकल्प ही नहीं है। हल–बैल के किस्से से एक कदम आगे चलते हैं। ऐसी कौन सी जरूरत है जिसके बिना खेती की कल्पना पहाड़ की उपजाऊ घाटियों के लिए एक सपना है ? वह जरूरत है पानी। जिसके बिना अधूरी है हमारे जीवन की कहानी। भारत में 80 फीसदी पानी का उपयोग कृषि कार्यों के लिए किया जा रहा है। जबकि उद्योग में 15 फीसदी पानी और घरेलू क्षेत्र में उपयोग हो रहा है मात्र 5 फीसदी पानी। अन्य विकसित देशों में व्यवस्थित कृषि पैटर्न के चलते पानी का उपयोग ठीक से हो पाता है। पहाड़ में पानी का संकट भी दिखता है, पानी के भण्डार भी दिखते हैं। यहां दोनों तरह की नदियां हैं, एक हैं बर्फानी नदियां जो ग्लेशियर आधारित हैं। दूसरी हैं स्रोत आधारित जो बरसात में भरी रहती हैं। नदियों में खनन और पहाड़ों में बढ़ते भूस्खलन ने नदियों के जल स्तर को प्रभावित किया है। इसका नदियों के कैचमैंट क्षेत्र पर भी असर पड़ा है। इसका प्रभाव छोटी गूलों पर स्पष्ट दिखता है। सरकारी सिंचाई योजनाओं के तहत नदियों में बहुत सारी लिफ्ट योजनाओं ने अधिकांश पानी को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाया है। इसका असर छोटी गूलों पर पड़ा है। इन गूलों पर आश्रित खेती चौपट होने के कगार पर आयी तो लोगों ने नदी किनारे बने खेतों को सींचने के लिए जनरेटर का उपयोग करना शुरू कर दिया। जनरेटर मशीन भी पानी को शिफ्ट ही कर रही है, पानी का स्रोत तो नहीं बढ़ा। बहुत से काश्तकार जो अभी भी छोटी गूलों पर आधारित हैं इतना खर्चा नहीं कर सकते कि मशीन से सिंचाई करें, ऐसे में एक बड़े तबके के समक्ष खेती का संकट आने वाला है। इसका समाधान कौन और कैसे करेगा यह एक सवाल है? खेती किसानी को प्रभावित करने में परिवारों की भी बड़ी भूमिका रही है। संयुक्त परिवारों के एकल में बदल जाने से काम करने वाले हाथ भी कम हो गये। खेती का बंटवारा हो गया। लोगों ने खेती दूसरों को कमाने के लिए या लीज पर दे दी। बदलते मौसम ने भी खेती को प्रभावित किया। वर्षा आधारित खेती सबसे ज्यादा प्रभावित हुई। समय पर वर्षा का ना होना, कम होना, या बहुत ही ज्यादा होना। ऐसे कई कारण रहे

हैं जिनकी वजह से खेती में बदलाव आये हैं।

कक्षा–कक्ष में बच्चों के साथ इस मुद्दे पर कैसे बात करें? क्या यह उनकी पाठ्यपुस्तकों में हैं? यदि नहीं तो कैसे इन मुद्दों को कक्षा के भीतर धीरे से प्रवेश कराया जाए और उनके रोजमर्रा के जीवन से जोड़ा जाए? यह एक सवाल है। क्योंकि बच्चे इससे जुदा नहीं हैं। वह तो बहुत गहरे अवलोकन करते हैं। 'पर्यावरण अध्ययन' विषय परिवेश से सीखने की पैरवी करता है या इस विषय की प्रकृति ही ऐसी है। परन्तु बिना अंतर्संबंधों को समझे इसे समझना और करना मुश्किल होगा। जैसे बैलों का संबंध सीधे खेतों से है, खाद से है, लोगों की आजीविका से है। गोवंश बढ़ाने के लैबोरेटेरियल तरीके आने से बैलों के साथ किसान का सीधा संबंध लगभग समाप्त होने की कगार पर है। एक वस्तु या जीव दूसरे पर आश्रित होता है। इस निरर्भता के टूटने से कई सारी चीजें प्रभावित होती हैं। एक और उदाहरण से भी परिवेशीय जीवन के अंतर्संबंध को समझ सकते हैं। जैसे घराट/घट। कल्पना करें जब डीजल और बिजली से चलने वाली चक्की नहीं थी तो क्या था? अनाज पिसाई का एक मात्र स्रोत था घराट। घराट के लिए पानी की जरूरत होती है, समाज के जानकार लोगों ने घराट की उपयोगिता को समझा था। घराट चलाने के लिए पानी का संरक्षण स्वतः ही हो जाता था। सबसे मजेदार बात यह थी कि घराट पर किसी व्यक्ति विशेष का स्वामित्व नहीं होता था। यह एक सामाजिक स्वामित्व का मसला था। जिस व्यक्ति ने घराट संचालन की जिम्मेदारी ली होती उसको सब लोग अपने पीसे हुए अनाज का कुछ तय हिस्सा देते थे। कोई एक व्यक्ति घराट का ऑपरेटर कभी नहीं हुआ। जो घराट में आता है वह अपना अनाज पीसकर घराट का हिस्सा रख कर चला जाता। डीजल खत्म तो चक्की बंद, बत्ती गुल तो मशीन लुल। लेकिन घराट तब तक जिन्दा रहेगा जब तक पानी रहेगा। घराट को समाज ने नहीं नकारा। घराट की उपेक्षा के पीछे बाजार का प्रभाव जिम्मेदार है। वह समुदाय भी एक हद तक जिम्मेदार है जिसने लोक ज्ञान को व्यवस्थित तरीके से सहेजने और उसे प्रसारित करने तथा अगली पीढ़ी तक पहुंचाने की ज़हमत नहीं उठाई।

सुन्दर से हरे–भरे खेत कत्यूर घाटी को समृद्ध बनाते थे आज वो कॉलोनी की शक्ल ले चुके हैं, क्यों? क्या लगता है आपको? ऐसा क्यों हुआ होगा? कहां से आये होंगे ये सब लोग? लोगों ने अपनी जमीनें क्यों बेची होंगी? इस बात का पर्यावरण से क्या संबंध है? किस तरह के बदलाव अब इस स्थान विशेष के आस–पास दिखते हैं? जैसे पहले कचरा ज्यादा था या अब ज्यादा है? ऐसे ही कितनी समस्याएं और आपको दिखती हैं? किसी स्थानीय ताजा घटना का जिक्र बच्चों से किया जा सकता है। जैसे गरुड़ बाजार में गोलू मार्केट में पड़े कचरे के ढेर से किस तरह की दिक्कतें हो रही हैं? नदी में इस सड़े हुए कचरे को डालने से क्या होगा? कचरा इस तरह सड़क पर डालना ठीक है क्या? जरूरी नहीं कि ऐसे ही सवाल हों, बच्चों के द्वारा भी इस तरह की घटनाओं का खुलासा किया जा सकता है जिसे सुना जाना चाहिए।

हमारे आस–पास मौजूद प्रत्येक वस्तु का दूसरी वस्तु के साथ अंतर्संबंध है। इसे समझना परिवेशीय/पर्यावरणीय अध्ययन का प्रमुख काम है। इस समझ के आधार पर पर्यावरण अध्ययन के संबोधों के जरिये बच्चों में कुछ क्षमताएं विकसित हों सकती हैं। जैसे–

- भाषागत दक्षता में अपनी बात को कह पाना।
- समझे हुए को लिख पाना, संदर्भ के अनुसार प्रश्न कर पाना।
- अवलोकन, वर्गीकरण, विश्लेषण, संवेदनशीलता, समालोचनात्मक प्रवृति का विकास।
- प्रश्न करने की दक्षता आदि।

(लेखक अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन से जुड़े हैं।)